स्वैबनाल्प (स्विटजरलैण्ड)
मई २३, २०००

सन्देश संख्या २२

अनुभव तो परम चैतन्य की ओर यात्रा का 'दिशा–संकेत' मात्र

अनुभव तो शून्यता, अस्तित्व, ऊर्जा एवं परम चैतन्य की ओर यात्रा के दिशा–संकेत मात्र हैं। इस पथ का यात्री अपनी स्मृतियों के बोझ अर्थात् चित्तवृत्ति से मुक्ति के लिए अपनी मोक्ष–प्रक्रिया की विभिन्न प्रवहमान अवस्थाओं के अनुभवों का अंकन अपनी व्यक्तिगत दैनन्दिनी में तो कर सकता है परन्तु लाहिड़ी महाशय को ईश्वर सदृश या प्रबुद्ध पुरूष प्रमाणित करने के लिए ऐसे अनुभवों को प्रकाशित करना समझदारी के अभाव वाले लोगों की भूल एवम् आत्म–प्रवंचनापूर्ण गतिविधि है। ऐसे लोगों की आत्मबोध में नहीं वरन् आत्म विस्तार, आत्मतुष्टि एवम् आत्मपुष्टि में ही अधिक रुचि होती है। समस्त अनुभव सांस्कृतिक एवं परम्परागत पूँजी से उत्पन्न पूर्वाग्रह–ग्रस्त प्रतिक्रियायें मात्र हैं। एक प्रबुद्ध व्यक्ति वास्तव में समझदारी की ऊर्जा से युक्त एक मुक्त पुरूष है। वह किसी विशेष विश्वास–पद्धति के बन्धन में नहीं बँधा है। ये विश्वास–पद्धतियाँ ही समस्त संकीर्णताओं, गड़बड़ियों तथा पथभ्रष्ट करने वाली शक्तियों की जड़ हैं। यही कारण है कि लाहिड़ी महाशय ने इस प्रकार गाया है:

आमार पूजा सृष्टि छाड़ा,
एते नेइको गंगाजलेर छड़ा।
एते नेइको आछे कोशा कुशी,
नेइको फुलेर राशि राशि।
सब देवता ग्यैलो चलि,
शून्येर साथे कोला कुलि।।
मेरी पूजा बहुत ही विचित्र प्रकार की है,
इसमें गंगाजल का प्रयोजन नहीं है।
किसी विशेष उपकरण की आवश्यकता नहीं है,
यहाँ तक कि फूल भी अनावश्यक हैं।
इस पूजा में सभी देवताओं का विसर्जन हो जाता है।
और शून्यता पूर्णता बन जाती है।

परन्तु प्रचारलोलुपों को शून्य–पुण्य में कोई रुचि नहीं है। इसीलिए तो उन्होंने क्रियायोग को एक आशा–आकांक्षा का अखाड़ा बना दिया। इन अनुभवों के वर्णन एवं व्याख्या द्वारा लाहिड़ी महाशय पर ईश्वरत्व थोप दिया गया ताकि तुच्छ, लोभी और कातरमन सुरक्षा एवं सफलता की लालच में क्षणिक सांत्वना व सुविधा हेतु उनपर निर्भर हो सकें। क्रियायोग मुक्ति का ज्ञान है न कि प्रभुत्व, लालसा और तुष्टि की अंधदौड़। मन तथा इसके जंजाल की गलाघोंटू पकड़ से मुक्ति ही परम प्रबोध है। मन और अनुभव केवल लौकिक एवं तकनीकी सन्दर्भों में मान्य हैं। जब बुद्ध से पूछा गया – प्रबोध के पश्चात् क्या है? तब उत्तर मिला – बिल्कुल कुछ नहीं। किन्तु उनके अनुयायियों ने देखा कि इस परम सत्य को संस्था के रूप में संगठित नहीं किया जा सकता है इसलिए उन्होंने इसे एक चरम आनन्दमय अवस्था आदि अनेक लुभावने रूपों में अभिव्यक्त किया जिसके फलस्वरूप उन्होंने मानव–मन के मूलभूत उपादान लोभ का 'बुद्धवाद' के प्रचार के लिए उपयोग किया। बुद्ध स्वयं बौद्ध नहीं थे हालाँकि उनके अनुयायी बौद्ध हैं।

पूर्णत्व की ओर बढ़ा एक गलत कदम भी व्यर्थ नहीं होता है बशर्ते कि वह अहंकार की यात्रा न हो। क्रियायोग किया जाता है किन्तु ध्यान तो स्वतःस्फूर्त होता है। ध्यान करना तो स्वतःस्फूर्त अभिव्यक्ति को बिगाड़ता है। ध्यान होने के लिए क्रिया की जाती है क्योंकि क्रिया मन की आत्मसंरक्षी–यंत्ररचना से जीवनधारा को मुक्त करती है। यथार्थ क्रियायें, जो मन की गतिविधियों से मुक्ति दिलाती हैं, उनसे प्राप्त की जा सकती हैं जिन्हें अहंवृत्ति से स्वयं मुक्ति प्राप्त हुई हो। इस प्रक्रिया का सर्वोत्तम उदाहरण है – निद्रा की सुसुप्तावस्था। जब आप जागते हैं, स्फूर्तियुक्त, नवीकृत तथा पुनर्जीवित हुआ–सा प्रतीत होता है। आप को प्रतीत होता है कि कदाचित् आपको बहुत सुख प्राप्त हुआ रहा किन्तु अब उस सुख–शान्ति का अनुभवकर्ता कोई नहीं रहा।

लाहिड़ी महाशय के सन्देश न तो वे, न उनके चमत्कार और न ही उनके अनुभव थे। जहाँ तक आपके दुःख और दुःखभोग का सम्बन्ध है, यह सब निरर्थक है। उनका सन्देश तो आप हैं। अपनी ओर झाँकें। अपने अहंभाव के उपादान एवम् उपद्रव को समझें। स्वाध्याय, तापस और ईश्वर प्रणिधान के द्वारा अन्तर्मुखी यात्रा की शुरूआत करें।

उन अंधकारमय प्रवृत्तियों को समाप्त करने में सहायक बनें जो उस ऊर्जा, जो लाहिड़ी–प्रक्रिया को समझने के लिए अत्यावश्यक हैं, को विनष्ट करने का प्रयास कर रही हैं। न तो पुस्तकनिष्ठ, न अवधारणानिष्ठ और न ही प्रचारनिष्ठ बनें बल्कि मात्र जीवननिष्ठ तथा जागृतिनिष्ठ बनें।

जय सद्गुरू लाहिड़ी महाशय

श्रीमत्शङ्कराचार्यविरचितम् निर्वाणषट्कम्

मनोबुद्ध्यहंकारचित्तानि नाहं
न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राणनेत्रे ।
न च व्योमभूमिर्न तेजो न वायुः
चिदानंदरूपः शिवोऽहम् शिवोऽहम् ।।१।।
न च प्राणसंज्ञो न वै पंचवायु–
र्न वा सप्तधातुर्न वा पंचकोशः ।
न वाक् पाणिपादौ न चोपस्थपायू
चिदानंदरूपः शिवोऽहम् शिवोऽहम् ।।२।।
न मे द्वेषरागौ न मे लोभमोहौ
मदो नैव मे नैव मात्सर्यभावः ।
न धर्मो न चार्थो न कामो न मोक्षः
चिदानंदरूपः शिवोऽहम् शिवोऽहम् ।।३।।
न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दुःखं
न मंत्रो न तीर्थं न वेदा न यज्ञाः ।
अहं भोजनं नैव भोज्यं न भोक्ता
चिदानंदरूपः शिवोऽहम् शिवोऽहम् ।।४।।
न मे मृत्युशंका न मे जातिभेदः
पिता नैव मे नैव माता न जन्म ।
न बंधुर्न मित्रं गुरुर्नैव शिष्यः
चिदानंदरूपः शिवोऽहम् शिवोऽहम् ।।५।।
अहं निर्विकल्पो निराकाररूपो
विभुर्व्याप्य सर्वत्र सर्वेन्द्रियाणाम् ।
सदा मे समत्वं न मुक्तिन बन्धः
चिदानंदरूपः शिवोऽहम् शिवोऽहम् ।।६।।